ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 **PP. No.- 183-184**

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-II, Issues-36, YEAR-April-June. 2025

सामाजिक आंदोलन

डॉ0 नीलम कुमारी

असिस्टेन्ट प्रोफेसर– समाजशास्त्र विभाग, अवधेश प्रसाद महाविद्यालय, नदौल, मसोढ़ी (बिहार) भारत

Received-17.05.2025, Revised-24.05.2025, Accepted-30.05.2025 **E-mail : neelam.monirba@gmail.com**

सारांशः ***कालांतर में जनहित के मुद्दों पर सत्ता की विविध संरचनाओं को संगठित जन आंदोलन द्वारा पुनःपरिभाषित किया जाता रहा है। ऐसे संगठित प्रयास राजनैतिक व सामाजिक आंदोलनों द्वारा संभव हुए हैं। राजनैतिक आंदोलन सामान्यतया राज्य सत्ता से जुड़ी शक्ति के हितार्थ होता है, जबकि सामाजिक आंदोलन जनमानस की आकांक्षाओं, आक्रोशों एवं जरूरतों की एक संगठित अभिव्यक्ति होता है। यह राज्य की नीतियों को या तो वैकल्पिक दृष्टिकोण प्रदान करता है या उसे बदल देता है। सामाजिक आंदोलन किसी स्वतःफूर्त जनसैलाब की प्रतिक्रिया या आवेश को नहीं कहा जा सकता।***

कुंजीभूत शब्द– सामाजिक आंदोलन, संगठित जन आंदोलन, पुनःपरिभाषित, राजनैतिक व सामाजिक आंदोलन, जनमानस

सामाजिक आंदोलन जनहित के मुद्दों पर एक संगठित प्रयास को कहते हैं, जिसका अपना विचारधारात्मक आधार होता है तथा जो अपनी संरचना एवं नेतृत्व के माध्यम से सामाजिक कर्मियों (आंदोलन के प्रति निष्ठाबद्ध लोगों) के साझे प्रयास की उत्तरोत्तरता को बनाए रखता है। अपने साझे उद्देश्य एवं विचारधारात्मक निष्ठा के निमित्त सामाजिक आंदोलन स्वायत्त (राज्य से) तरीके से परिवर्तन के उत्प्रेरक के रूप में क्रियाशील होता है। जॉन वीलकींसन के अनुसार, 'किसी सामाजिक आंदोलन की बदलाव के प्रति निष्ठा उससे जुड़े लोगों द्वारा निष्ठाबद्ध तरीके से आंदोलन के उद्देश्यों की प्राप्ति की दिशा में किया गया साझा एवं संगठित प्रयास होता है'। सामाजिक आंदोलन अन्य नवीन सामाजिक आंदोलनों से भिन्न होता है क्योंकि नवीन सामाजिक आंदोलन केवल वर्ग विशेष के संदर्भ इसकी व्याख्या नहीं करते।[1] साथ ही, ये आंदोलन चूंकि उत्तर–औद्योगिक एवं आधुनिक समाज के मुद्दों यथा जलवायु परिवर्तन (पर्यावरण), लैंगिकता, पहचना, मानवाधिकार आदि जैसे नवोदित मुद्दों के निमित्त आंदोलित होते हैं तथा इसमें जनलामबंदी की रणनीति तथा उसका सामाजिक आधार जनसंचार माध्यमों शिक्षित वर्ग (खासकर शहरी) एवं नागरिक समाज की मध्यस्थताओं से गुजरता है, अपने आप में अलग हैं। नवीन सामाजिक आंदोलनों के संबंध में विभिन्न विद्वानों ने अपने–अपने तरीके से विश्लेषण प्रस्तुत किया है। 1970 एवं 1980 के दशक के इन आंदोलनों के बारे में रजनी कोठारी ने कहा है, कि ये आंदोलन गैर–राजनीतिक राजनैतिक गठबंधन है जो कि स्वयं में एक नवीन सांगठनिक रूप में कार्य करते हैं तथा मुख्यधारा–राजनीति की चुनावी चाल एवं भ्रष्टाचार से मुक्त हैं।[2] गेल ऑम्बेट ने अपनी पुस्तक रीइनवेंटिग रेवूलूशन में भारत में सामाजिक आंदोलनों की बदलती प्रकृति का सिलसिलेवार विश्लेषण किया है तथा इसके बदलते वर्ग चरित्र में वर्ग, जाति, जेंडर, पर्यावरण जैसे कारकों एवं मुद्दों की मध्यस्थाता की बात की है।[3]

इसी प्रकार, रामचंद्र गुहा ने अपने मोनीग्राफ–द अनक्वाएट वुड्स में हिमालय क्षेत्र में खेतिहर प्रतिरोध के इतिहास का आकलन किया है। उन्होंने चिपको आंदोलन के जनपक्ष के पर्यावरणवादी चरित्र एवं निजीपक्ष के खेतिहर आंदोलन–सवरूप के अंतर को स्पष्ट किया है।[4] 1990 के दशक से आजतक के सामाजिक आंदोलनों को बाजार, नागरिक समाज, संचार एवं सूचना क्रांति, मानवाधिकार आदि विमर्शों एवं सामाजिक लामबंदी की नई तकनीकों एवं रणनीतियों के संदर्भ में समझा जा सकता है।

किसान/खेतिहर आंदोलन : स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में भूमि सुधार आंदोलन (विनोबा भावे) एवं अधिनियम तथा हरित क्रांति के परिणामस्वरूप अन्य पिछड़ी जातियों/वर्गों को सबसे बड़ा लाभ हुआ। पंजाब–हरियाणा एवं पश्चिम उत्त प्रदेश में एक नए 'कुलक' एवं 'बैलगाड़ी पूंजीवाद' (प्रणव बर्धन) की शुरूआत कृषि क्षेत्र में हुई। ये नवधनाढ्य किसान 1960 के दशक से किसान आंदोलनों की अगुआई (अपने अनुरूप कृषि नीति बनाने के निमित्त) सराकर पर दबाव बनाए रखने की रणनीति के साथ कर रहे थे। इस दौरान भारतीय किसान यूनियन (उत्तर प्रदेश–पंजाब–हरियाणा में), कर्नाटक राज्य रैयत संघ (KRRS) और संतकारी संगठन महाराष्ट्र में बड़े किसानों के मुद्दों पर किसानों को आंदालनकृत कर रहा था। आंदोलन जमींदारों के विरूद्ध न होकर राज्य के विरूद्ध थे तथा इनकी मांगों में खाद, बीज, बिजली, पानी आदि की कीमतों में कमी, खाद्यान्नो की कीमतों में वृद्धि, ऋण की आसान उपलब्धता जैसे मुद्दे शामिल थे।

इसके विपरीत 1960 एवं 70 के दशक में भूमि सुधार प्रयास की असफला से व्युत्पन्न 'भूमि कब्जा' आंदोलन भी हुए। वामपंथी राजनैतिक दलों ने बंगाल, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, केरल, उत्तर प्रदेश एवं बिहार में इन आंदोलनों को विभिन्न संगठनों, नामो एव नेतृत्वों के झंडो के अंतर्गत अंजाम दिया। बंगाल एवं आंध्र में नक्सल आंदोलन, प्रजा सोशलिस्ट पार्टी आदि की भूमिका रही जबकि उत्तर प्रदेश में भारतीय खेत मजदूर संघ ने भूमि कब्जा अभियान चलाया। कालांतर में भी ऐसे आंदोलन बिहार में एम.सी.सी. (माओइस्ट कम्युनिस्ट सेंटर), आंध्र प्रदेश में पी.डब्ल्यू.जी. (पीपुल्स वार ग्रुप) आदि द्वारा चलाया गया। महाराष्ट्र में दलित पैंथर्स ने भी इस प्रकार के आंदोलनों में अपनी भूमिका निभाई।

इन दो शुरूआती दशकों (1960 एवं 1970 के दशक) में हुए समृद्ध किसान आंदोलनों का महत्व अन्य पिछड़ी जातियों के बढ़ते राजनैतिक एवं आर्थिक प्रभाव के संदर्भ में समझा जा सकता है। बिहार में 1970 के दशक में मुंगेरीलाल आयोग की संस्तुतियों के क्रियान्वयन एवं 1990 के दशक में मंडल आयोग की अनुशंसाओं के क्रियान्वयन ने अन्य पिछड़ी जातियों/वर्गों के राजनैतिक एवं आर्थिक चरित्र को क्रांतिकारी रूप सें बदल दिया। इस दौरान किसानों की राजनीति एवं राजनैतिक दलों की राजनीति में पारम्परिकता पाई गई। चौधरी चरण सिंह, देवी लाल, महेन्द्र सिंह टिकेत, शरद जोशी, शरद पाटिल सरीख बड़े किसान नायक या तो प्रत्यक्ष रूप से राजनीति में ओहदेदार बन गए या शासन की दिशा एवं दशा निर्धारित करने लगे।

1990 के दशक से भारत में किसान/खेतिहर आंदोलनों की प्रकृति, पहुंच, सामाजिक आधार, संगठन एवं नेतृत्व शैली में क्रांतिकारी बदलाव आया है। बड़े किसान आंदोलनों का दौर छोट–छोटे स्थानीय मुद्दों एवं राज्य सरकार की नीतियों के इर्द–गिर्द प्रदर्शन एवं रैलियों में सिमट गया है। इसके पीछे इन आंदोलनों में मुद्दों संबंधी साझी संबंधी टकराव, संगठनात्मक बिखराव, गैर–सरकारी संगठनों एवं अंतर्राष्ट्रय फंडिग एजेंसी (वित्तीय सहायता देने वाले निकाय) की बढ़ती भूमिका है। नव–उदारवादी कृषि नीति के विरूद्ध पिछले वर्षों में किसान आत्महत्या, भूमि–अधग्रहण आदि मुद्दों पर कई किसान/खेतिहार आंदोलन हुए हैं।

अनुरूपी लेखक/ संयुक्त लेखक

कर्नाटक राज्य रैयत संघ, सेतकारी संगठन (ज्ञतैरै) आदि मजदूर संगठन वैश्वीकरण एवं बहुर्राष्ट्रीय कंपनियों की वकालत करने लगे हैं। अब वे संगठन कपास मूल्य में वृद्धि बिजली कीमत में कमी आदि मुद्दों पर स्थानीय आंदोलन कर रहे हैं।[5]

विशेष आर्थिक क्षेत्र एवं भूमि अधिग्रहण के कारण पिछले वर्षों में कई महत्वपूर्ण आंदोलन हुए हैं। एस.ई.जेड. विशेष रूप से सीमांकित भू–क्षेत्र हैं, जिसपर निजी कंपनियों का स्वामित्व होगा और यह क्षेत्र व्यापार तटकर, सीमा–शुल्क, उत्पाद शुल्क, विक्रय कर, आयकर, एवं सेवाकर से मुक्त होगा। संसद ने एस.ई.जेड. अधिनियम जून 2005 में पारित किया, जो फरवरी, 2006 से लागू कर दिया गया एस.ई.जेड. अधिनियम के उद्देश्यों में निर्यात को बढ़ावा देना, रोजगार के अवसर का निर्माण, मैन्युफैक्चरिंग में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश को बढ़ावा देना तथा आधुनिक तकनीकी स्थानांतरण की सकारात्मक दशाओं का निर्माण करना है।

19 राज्यों में 237 एस.ई.जेड. जो लगभग 86, 107 हैक्टेयर भूमि अधिगृहित करेगें, इस संबंध में केंद्र सरकार ने अधिसूचना जारी कर दी है। ये भूमि मूलतः कृषि योग्य एवं बहु–फसलीय जमीन है। इनके अधिग्रहण से खाद्य सुरक्षा को खतरा है। इन क्षेत्रों से लगभग 10 लाख लोगों का विस्थापन होगा तथा पुनर्वास संबंधी समस्याएं शुरू होंगी। एस.ई.जेड. एवं आर.ई.जेड. भू–माफिया को बढ़ावा देगा। ऐसे क्षेत्रों में इस प्रजातांत्रिक देश में निजी–कंपनियों के एकाधिकार मे महानगरीय–गैर प्रतिनिधियात्मक सरकारें कार्यरत्त होंगी। यानी ऐसे एस.ई.जेड. 'संप्रभु नगर राज्यं' के रूप में कार्य करेगी जहां भारतीय नागरिकों को संविधान प्रदत्त अधिकारों से वंचित होने का खतरा बना रहेगा। इन क्षेत्रों में भूमि बैंक संचयन की स्थिति पैदा होगी।

इन क्षेत्रों में मौलिक अधिकार निषध, श्रम कानून निषेध, पर्यावरण कानून निषेध, स्थानीय स्वशासन निषेध आदि जैसी स्थितियां उत्पन्न होगी जो प्रजातंत्र के मूलाधार पर कुठाराघात हैं।

एस.ई.जेड. के विरूद्ध किसान/खेतिहर आंदोलन : जहां रायगढ़, महाराष्ट्र में 26 गांव बचाओं संघर्ष समिति इंडिया बुल्स के विरूद्ध आंदोलन कर रही है। वहीं ग्रेटर मुंबई में रिलायंस के विरूद्ध भी आंदोलन चल रहा है। सूरत एवं नवसारी जिलों में बॉक्साइट एवं इग्नाइट खदानों के लिए भूमि अधिग्रहण किया जा रहा है साथ ही औद्योगिक संयत्रों को लगाने की मुहिम के विरूद्ध गुजरात खेकुत समाज भागुभाई पटेल आदि के नेतृत्व में पिछले चार वर्षों से आंदोलन कर रहा है।6 अंबाला एवं फतेहाबाद से हरियाणा सरकार विभिन्न परियोजनाओं के निमित्त भूमि अधिग्रहण कर रही है। अंबाला में 1860 एकड़ जमीन उद्योगों के लिए तथा फतेहाबाद में 1313 एकड़ जमीन नाभिकीय विद्युत परियोजना के लिए अधिगृहित की जा रही है।[7] किसान नेता कृष्ण स्वरूप के नेतृत्व में ऐसे भूमि अधिग्रहण के विरूद्ध पिछले दो वर्षों से आंदोलन चल रहा है। बंगाल में सिंगूर (जहां टाटा नैनो प्लांट) एवं नंदीग्राम में किसान आंदोलन के दौरान कई किसानों की मृत्यु हो गई जिसके परिणामस्वरूप तृणमूल कांग्रेस की सरकार ने भूमि अधिग्रहण अधिनियम में संशोधन कर उन किसानों को अपनी जमीन वापस लेने का विकलप देना चाहती थी जो मुआवजे की राशि से संतुष्ट नहीं थे। लकिन टाटा समूह एवं बंगाल सरकार के बीच अब यह मामला कलकत्त उच्च न्यायालय के द्वी–पीठ के समक्ष विचारधीन है।[8]

भूमि अधिग्रहण एवं जनसत्याग्रह आंदोलन : पिछले दो दशकों में सबसे बड़ा किसान/खेतिहर आंदोलन एकता परिषद् के पी. वी. राजगोपाल के नेतृत्व में शुरू हुआ। 2 अक्टूबर, 2012 को इस जन सत्याग्रह आंदोलन में 26 राज्यों के किसानों ने ग्वालियर से दिल्ली तक पचास हजार किसानों की एक रैली निकाली जिसके दबाव में भारत सरकार ने ग्वालियर में इन मांगों की पूर्ति का आश्वासन दिया।

हालांकि, इस जनसत्याग्रह आंदोलन ने सरकार के आश्वासन से असंतोष जताते हुए 350 किलोमीटर की पैदल यात्रा शुरू की और अंततः ग्रामीण विकास मंत्री एवं एकता परिषद् के बीच दस–सूत्री समझौता हुआ। इस समझौते के अनुसार अगले छह महीने के अंदर केंद्र सरकार भूमि अधिग्रहण (संशोधन) विधेयक का प्रारूप प्रस्तुत करेगी तथा राज्य सरकारों से सहमति एवं सहयोग की अपील करेगी। जन सत्याग्रह ने शेल्टर, होमस्टेड, किसानों के लिए भूमि, इंदिरा आवास का फेडिंग दोगुना करने, भूमि–विवाद निपटारे के लिए फास्ट ट्रैक कोर्ट की स्थापना, आदिवासियों एवं दलितों को भूमि पहुंच आदि मांगों पर भारत सरकार से राज्यों पर दबाव बनाने की अपील की।

26 नवंबर से 30 नवंबर 2012 के दौरान लगभग 60 जन आंदोलनों के साझे प्रयास से एक विशाल 'जन संसद' का आयोजन दिल्ली के जंतर–मंतर पर किया गया। इसमें मेधा पाटकर (छंतउंकं ठंबींव ।दकवसंद) अरूणा राय (MKSS), गाग्री चक्रवती (NFIW), सुभाषिनी अली (AIDWA), योगेन्द्र यादव (AAD), पी. वी. राजगोपाल (एकता परिषद) सरीखे आंदोलन के बड़े समाजकर्मियों ने मिलकर भूमि अधिग्रहण, पर्यावरण, महिला, आदिवासी, दलित अधिकारों एवं विकास की प्रकृति एवं अपेक्षित नीतिगत विकल्प संबंधी प्रस्ताव पारित किए। इस 'जन संसद' ने किसी भी भूमि अधिग्रहण में 'ग्राम सभा की सहमति' की अनिवार्यता पर बल दिया।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. M. P. Singh and Rekha Saxena, 2011. Indian Politics. Constitutional Fouccations and Institutional functioning. PHI, N. Delhi, pp. 325-28
2. Rajni Kothari, 1988. State Against Democracy : In Search of Human Governance Ajanta Publishers, New Delhi.
3. Gail Omvebt, 1993. Reinventing Revolution : New Social Movements and the Socialist Traditions in India, NY: L.M.E. Sharpe.
4. Ramchandra Guha, 1989. The Unquiet Woods : Ecological Change and Peasant Resistance in the Himalaya, N. Delhi. OUP.
5. M.P. Singh, Ibid.
6. See Times of India, May 5. 2011 and July 10, 2011 (Surat Edition).
7. Bhaskar Mukharjee Times News Network. Times of India. June 27,2011
8. The Hindi December 26 2012

*****